भारत–चीन सम्बन्धों के मध्य तिब्बत

डॉ0 भारती चौहान,
(एसो. प्रोफेसर),
रक्षा एवं स्त्रॉतेजिक अध्ययन विभाग,
हे.न.ब.गढ़वाल (केन्द्रीय) विश्वविद्यालय,
श्रीनगर गढवाल, उत्तराखण्ड

राहुल कुमार,
(शोध छात्र),
रक्षा एवं स्त्रॉतेजिक अध्ययन विभाग,
हे.न.ब.गढ़वाल (केन्द्रीय) विश्वविद्यालय,
श्रीनगर गढवाल, उत्तराखण्ड

हिमालय में स्थित तिब्बत एक छोटा सा स्वतंत्र राष्ट्र है जो कि भारतीय सुरक्षा के लिए अभेद कवच था अब वह चीन का हिस्सा बन गया है। चीनी आधिपत्य के बाद भी तिब्बत का महत्व भारत के लिए कम नहीं हुआ। प्रारम्भ से ही कोई न कोई शक्तिशाली देश प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से निरन्तर इसे अपने प्रभाव में रखने का प्रयास करता रहा, जो कि इस बात का सूचक था कि इनमें कौन शक्तिशाली है। इसी सदी के प्रारम्भ में यह ब्रिटेन, रूस और चीन तीनों देशों के शासन परिधि से घिरा होने के कारण उनके मध्य शक्ति प्रदर्शन का केन्द्र बना रहा। तिब्बत हमारा पड़ोसी ही नहीं बल्कि उनके साथ हमारे धार्मिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध जुड़े है। दोनों की संस्कृति इतनी स्थायी एवं विशाल है, कि उनको सहज रूप से विलुप्त नहीं किया जा सकता है।

तिब्बत की भौगोलिक अवस्थिति

विश्व की सर्वाधिक ऊँचाई पर स्थित $32^{0}30'$ उत्तरी अंक्षाश तथा 86^{0} पश्चिम देशान्तर के मध्य हिमालय और चीन की कुनलिन घाटियों के मध्य स्थित इस राष्ट्र का क्षेत्रफल 47000 वर्गमील है।[1] इसके उत्तर दिशा में चीन, मंगोलिया, पूर्व में तुर्किस्तान दक्षिण में भारत, नेपाल, म्यांमार स्थित है। रूस एवं अफगानिस्तान इसके निकटवर्ती देश हैं। एशिया की वृहत्तर नदियों ह्वांगवो एवं मिकांग का उद्गम स्थल है। तिब्बत की अपनी समृद्ध सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक परम्परा थी। दलाई लामा के रूप में इसका राष्ट्राध्यक्ष होता था। कांशाग नाम की मंत्री परिषद् तथा सौदड़ नाम की विधान सभा हुआ करती थी। इसके साथ ही उसकी अपनी मुद्रा प्रणाली, कर प्रणाली, विधि एवं न्याय प्रणाली, डाक प्रणाली, स्थायी सेना तथा राष्ट्रीय ध्वज थाएवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का संचालन कुशलता पूर्वक होता था। यह ऐतिहासिक यर्थाथ है कि लगभग 2000 वर्षों से लेकर इस सदी के मध्य तक तिब्बत एक सम्प्रभु राष्ट्र था। उसके पास अन्तर्राष्ट्रीय मान्यताओं के अनुरूप वे सभी मानदण्ड थे जो एक स्वतंत्र राष्ट्र के लिए मूल रूप से आवश्यक होते है। भारतीय मूल के प्रतिष्ठित अधिवक्ता एवं लेखक जे0पी0 मित्तर ने ब्रिटेयल ऑफ तिब्बत में लिखा है कि मंचू शासन के पराभव के बाद तिब्बत की अपनी टकसाल थी जहां से वह सिक्कों सहित कागज के नोट छापता था। उसकी न केवल अपनी सेनाथी बल्कि आयुद्ध निर्माण कारखाने भी थे। तिब्बत की अपनी डाकसेवा थी और तिब्बत सरकार तिब्बत से बाहर आने–जाने के लिए पासपोर्ट तक जारी करती थी। सबसे महत्वपूर्ण तो यह था कि तिब्बत चीन को कोई कर राशि भी नहीं देता था।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

तिब्बत का ऐतिहासिक वृताान्त 7वीं शताब्दी से मिलता है। 8वीं शताब्दी से यहां बौद्ध धर्म का प्रचार प्रसार शुरू हो गया था। 9वीं सदी में तिब्बत की धरती पर लामा धर्म का उदय हुआ।

वर्ष 1013 में भारत से धर्मपाल तथा अन्य बौद्ध विद्वान तिब्बत गये। 1042 में दीपांकर श्री ज्ञान अतिशा तिब्बत पहुँचे उन्होने बौद्धधर्म का प्रचार–प्रसार शुरू किया।[2] शाक्यवंशियों का शासन काल 1207 ई0 से शुरू हुआ। 13वीं सदी के मध्य चीन पर मंगोल शासक कुलवय खाँ का शासन था। यह मुगलशासक चंगेज खाँ का पुत्र था।वह स्वयं लामा धर्म का अनुयायी था। उसने तिब्बत से सर्वश्रेष्ठ लामा को बुलाकर तिब्बत का शासन धार्मिक नेताओं के हाथ सौंप दिया।[3] चीन पर मंगोलों की सहमति से तिब्बत का शासन धार्मिक नेताओं के हाथों में आ गया। मंगोलों का अन्त वर्ष 1720 में चीन के मंचू प्रशासन के द्वारा हुआ। तत्कालीन साम्राज्यवादी अंग्रेज जो कि दक्षिण पूर्वी एशिया में अपना शासन स्थापित करते जा रहे थे, उन्होंने तिब्बत में भी अपनी सत्ता स्थापित करनी चाही, लेकिन उन्हें यहां सफलता नहीं मिल पायी। 18 वीं सदी में चीन ने तिब्बत में अपनी कुचक्रों का जाल फैलाया लेकिन तिब्बतियों ने उन षड्यंत्रकारियों को मौत के घाट उतार दिया। इस घटना से असंतुष्ट होकर तत्कालीन चीनी शासक शीनत्यूंग ने भारी मात्रा में सेना भेजकर विद्रोह को दबा दिया और सारे तिब्बत में आतंक फैल गया। दूसरी तरफ नेपाल के गोरखा राजपूतों ने तिब्बत पर आक्रमण करके उसके कुछ भाग पर कब्जा कर लिया। चीन ने मौका देखकर सन् 1892 में पुनः भारी आक्रमण करके तिब्बत को पूरी तरह अपने अधिकार में कर लिया, साथ ही विदेशियों के लिए तिब्बत में प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिये।

भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान अंग्रेजों ने तिब्बतियों की रजामंदी के बिना चीनियों से मिलाकर एक संधि पत्र तैयार किया, साथ ही साथ ब्रिटिश भारत एवं तिब्बत के बीच कुछ सीमा चिन्ह खड़े किये, लेकिन जब तिब्बतियों को इस गुप्त संधि का पता चला तो उन्होंने उन सीमा चिन्हों को उखाड़ फेंका तथा अंग्रेजों की व्यापार सम्बन्धी मांगों को ठुकरा दिया। परिणाम स्वरूप तिब्बत एवं अंग्रेजी सेना के बीच युद्ध हुआ और तिब्बतियों को परास्त करके ब्रिटिश सेनायें ल्हासा तक पहुँच गयी। तत्पश्चात् दूसरा सन्धि पत्र तैयार किया गया जिस पर दलाईलामा, मंत्रीमंडल, राष्ट्रीय सभा, डेपुनसेरा एवं गाठेन मठों की मुहर लगायी गयी। इस सन्धि पर पत्र चीन ने कोई मध्यस्थता स्वीकार नहीं की और ना ही किसी प्रकार की आपत्ति व्यक्त की। तत्पश्चात् तिब्बत को एक स्वतंत्र सम्प्रभु राष्ट्र घोषित किया।[4]

सन् 1904 में ब्रिटिश कर्नल यंगहसबैण्ड ने अपने अभियान के दौरान एक समझौते के तहत तिब्बत को एक सम्प्रभु देश माना लेकिन चीन द्वारा व्यापारिक रियासतो में हस्तक्षेप किये जाने के भय से अग्रजों ने चीनी सरकार से 1906 मे अनुकूल स्थिति प्राप्त कर ली और यांटुग ग्यांङ्से एंव गरटोक में अपनी सैनिक चौकियां स्थापित की।[5] चीन ने इस सन्धिपत्र का उल्लघंन कर डाला और पुनः 1910 में तिब्बत पर आक्रमण कर चीनी सेना तिब्बत की भूमि पर छा गयी।लेकिन तिब्बतियों ने अपनी भूमि से एक–एक चीनी को निष्काषित कर दियाऔर तिब्बत विरोधों का घर बन गया। ये विरोध 20वीं सदी के प्रारम्भ में उग्र रूप धारण कर सामने आये। चीन की राज्य क्रांति के कारण तिब्बत पर उनका अकुंश ठीला पड़ गया, लेकिन स्थिति मे सुधार होते ही अधिकार लोलुप एंव विस्तारवादी चीनी सरकार ने तिब्बत को चीन का अंग घोषित कर दिया। इस घोषणा का भारत की सरकार ने अंग्रेजों का घोर विरोध किया। जिसके कारण स्थिति और बिगड़ गयी, इस संघर्ष को दबाने के लिये 1913 में अंग्रेजों, चीनीयों एवं तिब्बतियों की एक बैठक हुयी जिसमें इस पहाड़ी राज्य को दो भागों में विभक्त कर दिया गया है।[6]1. पूर्वी भाग जिसमें वर्तमान चीन के संघाई व शिक्याग प्रांत है, इन्हे अन्तर्वती तिब्बत कहा जाता है। 2. पश्चिमी भाग जो प्रदेश बौद्ध प्रदेश धर्मानुयायी शासक लामा के हाथ में रहा उसे बाह्य तिब्बत कहा गया। अर्न्तवर्ती तिब्बत चीन शासित प्रदेश रहे और शेष तिब्बत

पर उस पर पर उसका कोई कब्जा नही होगा और ना ही उसके आंतरिक मामले में हस्तक्षेप करेगा।चीन ने इस संधि पत्र को मानने से इंकार कर दिया और 1917 पुन तिब्बत पर आक्रमण कर दिया, लेकिन युद्व में चीन को भारी हार होने के कारण उसने उक्त संधि पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये। इस संधिपत्र के अनुसार चीन एंव ब्रिटेन दोनों ने तिब्बत की अखंडता का आदर करने, तिब्बत में अपनी सेनायें न भेजने और तिब्बत सरकार के प्रशासन में किसी प्रकार हस्तक्षेप न करने के लिये बाध्य हुये। इस सन्धि के बाद भी चीन के कुचक्र चलते रहे। सन् 1928 में चीन ने रूस को तिब्बत के विरूद्ध भड़काना शुरू कर दिया, और दूसरी ओर तरफ गुप्त रूप से रूस के विरूद्ध तिब्बत की सहायता करने लगा। इससे भी चीन का मकसद पूरा नही हुआ और उसने पुनः 1931 में तिब्बत पर आक्रमण कर दिया। इस समय तिब्बत को भारी हानि उठानी पड़ी। उचित अवसर को देखते हुए तत्कालीन चीनी राष्ट्रपति ने तिब्बत के सामने प्रस्ताव रखा कि वह पाँच राज्यों को सदस्य बन जाये अर्थात तिब्बत को चीन मिला लिया जाये लेकिन तिब्बत ने यह प्रस्ताव ठुकरा दिया।

वर्ष 1933 मे 13वें दलाई लामा की मुत्यु के पश्चात् बाह्य तिब्बत धीरे–धीरे चीनी घेरे मे आने लगा। वर्ष 1940 में 14वें दलाई लामा के राज्यभिषेक मे ब्रिटेन,भारत,मंगोलिया, नेपाल, भूटान, सिक्किम आदि देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लेकर यह सिद्ध कर दिया कि वे तिब्बत को एक सम्प्रभु राष्ट्र के रूप में स्वीकार करते हैं, और दलाई लामा को उसका वास्तविक शासक मानते हैं। चीन को यह आशा नही थी लेकिन अपनी आंतरिक कमजोरी के कारण वह कोई कदम नहीं उठा सका, जैसे ही आंतरिक स्थिति में सुधार आया वैसे ही उसने तिब्बत में अपना जाल बिछाना शुरू कर दिया और तिब्बत को यह मानने के लिए बाध्य कर दिया कि भीतरी स्वशासन तो उसका होगा लेकिन राष्ट्र नीति का संचालन चीन करेगा।

धीरे–धीरे सैनिक दृष्टि से स्वायत्तता स्थापित करके चीनी शासकों ने तिब्बत में साम्यवादी व्यवस्था स्थापित करनी चाही, इन्होंने सर्वप्रथम पंचेन लामा को दलाई लामा के विरूद्ध भड़काया। तिब्बत की व्यवस्था सुधारने के लिये एक समिति बनायी तथा दलाई लामा को अध्यक्ष एवं पंचेनलामा को सदस्य बनाया, कुछ समय बाद समिति ने दोनों लामाओं के विरूद्ध प्रचार करना शुरू किया तथा दलाई लामा को अपदस्थ करने के लिये पंचेन लामा को भड़काना शुरू कर किया, दोनों लामाओं को संघर्ष की स्थिति में लाने के लिए चीनी राजनीतिक हथकण्डों का प्रयोग करते रहे। डचमूल के ख्याति प्राप्त अधिवक्ता माइकल सी वॉन वे प्राग ने 'द स्टेट्स ऑफ तिब्बत' में उल्लेख किया है कि "1911 से 1913 के घटनाक्रम और उपलब्ध जानकारियों के आलोक में इस नतीजे पर पहुँचा जा सकता है कि तिब्बत ने 1913 तक पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त कर ली थी[7]।''

अक्टूबर 1949 में पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना के अस्तित्व में आने से पूर्व तिब्बत एक सम्प्रभु राष्ट्र था लेकिन 7 अक्टूबर 1949 को चीन ने पूर्वी तिब्बत पर हमला कर लिया और जल्दी ही चामड़ों तक चीनी सेना ने कब्जा कर लिया। अधिकांश तिब्बती सैन्य टुकड़ियों को मारकाट कर बंदी बना दिया गया जिसमें गर्वनर नाग्पा शेप भी शामिल थे। पूर्वी तिब्बत पर हस्तक्षेप के विरोध में भारत सरकार ने 21 अक्टूबर एवं पुनः 28 अक्टूबर 1949 को विरोध पत्र चीन भेजा। पत्र के जवाब में 30 अक्टूबर 1949 को चीनी सरकार ने जोर देते हुए कहा कि तिब्बत चीन का अंग है। तिब्बत की समस्या पूरी तहर से चीन की घरेलू समस्या है। चीन की पीपुल्स लिब्रेशन आर्मी तिब्बत से वहां के लोगों को मुक्त कराने एवं चीन की सीमाओं की रक्षा के लिए केन्द्रित है और सेन्ट्रल पीपुल्स गर्वनमेंट की दृढ़ नीति है।[8]

पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना की प्रथम वर्षगांठ पर 30 सितम्बर 1950 को चाऊ–इन–लाई ने घोषणा करते हुए कहा कि तिब्बत को अवश्य मुक्त कराया जायेगा और एक सप्ताह बाद चीनी सेना ने तिब्बत पर आक्रमण कर दिया। बीजिंग रेडियो ने कहा कि तिब्बत पर आक्रमण का मकसद 30 लाख तिब्बतियों को मुक्त कराने के साथ–साथ पश्चिम सीमा पर चीन की सुरक्षा को सुदृढ़ करना है। अन्ततः 40000 सैनिकों के साथ चीन ने पूरी तरह से तिब्बत पर अपना कब्जा कर लिया। तिब्बत पर प्रभुत्व स्थापित करने के पश्चात् चीनियों ने सबसे पहले ऐतिहासिक इमारतों, आलेखों आदि को नष्ट कर करवाना शुरू किया जिससे चीन की विश्वासघाती एवं मित्र विरोधी परम्पराओं का पता चलता है।[9]धर्मगुरू दलाई लामा भागकर भारत आ गये। अप्रैल 1954 में पंचशील समझौता करके नेहरू सरकार ने चीन द्वारा हथियाये गये तिब्बत पर चीनी क्षेत्र की मोहर लगवा दी, तब से लेकर आज तक भारत–चीन सम्बन्धों में तिब्बत को लेकर उतार–चढ़ाव आने के बाद भी गतिरोध बना हुआ है।

तिब्बत के सन्दर्भ में चीन एंव भारत की सामरिक संकल्पना

चीनी संकल्पना – चीन द्वारा तिब्बत को अपने नियंत्रण में लेने का मुख्य कारण उसकी असुरक्षा की भावना थी। चीनी सरकार ने यह निश्चय किया कि यदि उसे उन्नति करनी है तो राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण अपने लिए खतरा उत्पन्न करने वाला पिछला दरवाजा बन्द करना होगा। क्योंकि ब्रिटिश शासन के दौरान तिब्बत को मध्यवर्ती देश बनाने का जो प्रयास था, जिसे कि चीन ने ब्रिटिश सरकार की घिनौनी साम्राज्यवादी चाल बताते हुए साम्राज्यवादी देशों द्वारा चीन की पीठ पर छूरा घोंपने के लिए देश के पिछला दरवाजा खुला रखने की संज्ञा दी और तिब्बत को चीन से अलग कर चीन की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न करना साम्राज्यवादीयों का मुख्य लक्ष्य बताया।[10] यद्यपि तिब्बत वाले मार्ग से किसी ने भी चीन पर आक्रमण करने का प्रयास नही किया, लेकिन ईस्ट इण्डिया कम्पनी नेव्यापार की अवश्य कोशिश की थी। ब्रिटिश सरकार का ल्हासा पर वर्ष 1947 तक जो प्रभाव रहा उसे चीन न केवल साम्राज्यवादीयों द्वारा आंतरिक मामले में दखल मानता रहा बल्कि चीन को घेरने का षड्यंत्र बताता रहा। निरन्तर युद्धों, गुरिल्ला युद्धोंमें व्यस्त रहने वाले चीन ने तिब्बत के सामरिक महत्व को पहचाना और पिछला दरवाजा बंद करने का निश्चय किया। धीरे–धीरे तिब्बत के महत्व को लेकर वह सवेंदनशील होने लगा और वर्ष 1959 में तिब्बत विद्रोह और 1962 में भारत चीन युद्ध के बाद तिब्बत के सामरिक महत्व को चीन ने पूरी तरह स्वीकार कर लिया।

तिब्बत में प्रवेश करते ही चीनी सेना ने वहां सड़कों का जाल बिछाना शुरू किया।वर्ष 1950 से 1976 तक वहाँ जो भी निर्माण कार्य हुआ, वह सैनिक दृष्टि से किया गया। आर्थिक विकास के नाम पर खर्च की गयी धनराशि से सामरिक महत्व की सड़कों का निर्माण हुआ। प्रथम पंचवर्षीय योजना 1953–57 में चीन ने लाखोंयू.एस. डॉलर तिब्बत पर खर्च किये। पेइचिंग ने 42,320 लाख यू.एस. डॉलर की राशि परिवहन एंव संचार पर व्यय किये। विकास पर खर्च की गयी यह राशि 11.7 प्रतिशत थी जिसमें अधिकांश तिब्बत में सड़कें बनवाने मे व्यय हुआ।[11] जिन राष्ट्रीय राजमार्गों का निर्माण किया गया उनमें अधिकांश तिब्बत के सिक्यांग क्षेत्र में बनाये गये और इन सड़कों को चीन के राष्ट्रीय राजमार्गों से जोड़ दिया गया। इन मार्गों का निमार्ण कार्य कर चीनी सेना वर्ष 1962 तक भारत से युद्ध करने के लिए तैयार हो गयी। वर्ष 1965 के अन्त तक दो राजमार्गों के माध्यम से तिब्बत का मध्यचीन से सम्पर्क स्थापित हो गया और 1975 तक चीन ने 15800 कि.मी. लम्बी सड़क का

निर्माण कर लिया। इन राजमार्गों पर बाह्य तिब्बत तक 300 स्थायी पुलों का निर्माण किया गया, इस निर्माण कार्य से 97 प्रतिशत क्षेत्र मोटर मार्ग से जुड़ गया।

चीन ने 25 वर्षों (1951–75) तक तिब्बत के सामजिक आर्थिक विकास पर ध्यान नही दिया। वह केवल सामरिक महत्व के निर्माण कार्य करवाता रहा। इस प्रकार के निर्माण कार्य के पीछे उसके निम्न कारण थे–

1. तिब्बत की सीमायें भारत एंव रूस से मिलती हैं और माओ के अनुसार ये दोनों देश वर्ष 1960 के आरम्भ से ही चीन के विरूद्व सांठ–गांठ करते रहे हैं।
2. तिब्बतियों द्वारा निरन्तर चीनी सेना का विरोध किया गया, यद्यपि तिब्बतियों की सैन्य शक्ति इतनी अधिक नही थी कि वे किसी भी प्रकार से चीनी सेना का सामना कर सके लेकिन दूसरे देश के हस्तक्षेप का भय चीन को हमेशा बना रहा।
3. भारत एवं चीन में चल रही हथियारों की प्रतिस्पर्धा ने चीन को तिब्बत में सैनिक कार्यों के लिए प्रोत्सहित किया।

अपने सामरिक हितों को ध्यान में रखते हुए सर्वप्रथम उन चार राजमार्गों का निर्माण किया जो तिब्बत को पड़ोसी चीन के मार्गों से जोड़ते हैं। दूसरे चरण में उन राजमार्गों का निर्माण किया जो हिमालय में अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक जाते हैं। स्नेचुवान तिब्बत राजमार्ग ऐसा है जो दक्षिण एवं दक्षिणी पश्चिमी तिब्बत को पार भारतीय की सीमा तक पहुंचती है।एक सड़क तिब्बत सिक्किम सीमा तक तथा दूसरी स्नेचुवानहोते हुये नेपाल की सीमा तक जाती है। ये बड़े राजमार्गन केवल तिब्बत को चीन से जोड़ते हैं बल्कि तिब्बत के पठार को पार करते हुये पूर्वी, पश्चिमी और मध्य क्षेत्रों में भारत–चीन सीमा पर अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से 35 मील की दूरी तक पहुँचते हैं। संगठनात्मक दृष्टि से आधारभूत संचार सड़क को चीन की वायु सेना ने महत्व दिया। प्रारम्भ में वायु सेना को कार्मिक सामान ढोने के लिये किये गया, लेकिन तिब्बत पर कब्जा होने के बाद वहां वायु सेना को उतारने के लिये व्यापक स्तर पर हवाई अड्डों का निर्माण होने लगा। वायु सेना ने तिब्बत मार्ग तक पहुंचने के लिये सड़क मार्ग की दूरी कम कर दी। वर्ष 1963 तक 12 हवाई अड्डों का निर्माण पूरा हो गया था, जिनमें से अधिकांश भारत, नेपाल एवं भूटान सीमा पर स्थित है। 25 हवाई अड्डे ऐसे हैं जो प्रशासनिक और सैनिक मुख्यालयोंके समीप हैं। तिब्बती स्त्रोतों के अनुसार चीनी सैनिकों की संख्या 3,00,000 से कम नहीं है, जबकि भारतीय रक्षा मंत्रालय के अनुसार 3से 5 लाख सैनिक तिब्बत में तैनात हैं।[12]चीनी संख्या का आकार जो भी हो लेकिन यह स्पष्ट है कि तिब्बती प्रशासन में बड़ी संख्या में चीनी सैनिक कार्यरत हैं।

चीन तिब्बत को सुरक्षात्मक दृष्टि से देखकर अपनी सामरिक गतिविधियों का संचालन करता रहा।वर्ष 1979 से पूर्व चीन के सैनिक एंव सिविलियन शासन में कोई अन्तर नहीं था। सैनिक शक्ति के माध्यम से चीन यह सिद्ध करने मे सफल हो गया कि तिब्बत की पहली आवश्यकता राष्ट्रीय सुरक्षा है। चीन ने अपने सुरक्षार्थ Five Finger Theory की घोषणा की, जिसमें तिब्बत हाथ है एवं नेपाल, भूटान, सिक्किम, लद्दाख एंव नेफा इसकी पाँच अंगुलियाँ हैं।

भारतीय संकल्पना – भारत की उत्तरी सीमा का विस्तार हिमालय के साथ–साथ हुआ, भारत–चीन के मध्य वफर स्टेट होने के कारण तिब्बत में शांति थी लेकिन चीनी अधिग्रहण के पश्चात् सिक्कम, नेपाल, भूटान, देश भारत और चीन के मध्य सीमान्त क्षेत्र के अर्न्तगत आ गये। भूटान, नेपाल और सिक्किम अध्यापित भाग के अलावा

भारत की सम्पूर्ण क्षेत्र की सीमायें अफगानिस्तान और सिक्यांग के ट्राई जंक्शन से लेकर उत्तर–पूर्व में म्यांमार से लगती है, नेपाल ओर तिब्बत की सीमा 700 मील लम्बी है। जम्मू–कश्मीर राज्य के पूर्व में तिब्बत तथा उत्तर मे सिक्यांग स्थित है। तिब्बत हिमाचल प्रदेश एंव पंजाब के पूर्व स्थित है। सिक्यांग एवं भूटान की सीमायें भी तिब्बत से मिलती है।तिब्बत का भारतीय सुरक्षा में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इसलिए भारत को ब्रिटिशों से तिब्बत के सन्दर्भ मे निम्न अधिकार प्राप्त हुये[13]–

1. ल्हासा मे एक भारतीय राजनीतिक ऐजेन्ट रख सकना।
2. ग्यान्तसे गरटोक और यांदुग में व्यापारिक ऐजेन्सी स्थापित कर सकना।
3. ग्यान्तसे में एक सैनिक दस्ता रखना जो व्यापार मार्ग की रक्षा कर सके।

आजादी के बाद भारत के लिए तिब्बत का महत्त्व कम नही हुआ, पूर्व में असम, उत्तर में गढ़वाल–कुमाऊं और पश्चिम में गिलगिट तक विस्तृत सीमान्त मे रहने वाले लोगों का बड़ा भाग ऐसा है, जिसकी भाषा, धर्म, जाति, संस्कृति एंव आजीविका आदि की दृष्टि से तिब्बत के साथ सहस्त्रों वर्ष तक संबंध रहे। तिब्बत से लगा क्षेत्र हमारे सीमातंवासीयों का व्यपारिक दृष्टि से आजीविका का प्रमुख साधन रहा है। इन व्यापरियों को विभिन्न जगहों पर अलग–अलग नामों से पुकार जाता है, कश्मीर, लददाख में डोकपा, पूर्वांचल मे आसपानी एंव आदिस, हिमाचल प्रदेश में लाहुली, किन्नर के गद्दी, उत्तराखण्ड में भोटिया एंव नेपाल में हुमली–जुमली एंव शेरपा नाम से जाने जाते हैं। गढ़वाल (उत्तराखण्ड) का नीति माणा का उत्तरीसीमांत तथा कुमाऊं (उत्तराखण्ड) असकोट से कपकोट का उत्तरी सीमांत भोटान्त प्रदेश के नाम से जाना जाता है। इस भोटान्त प्रदेश के निवासियों की अर्थव्यस्था का मुख्य आधार तिब्बत से व्यापार रहा है। हुणिया (हुण देश या तिब्बत) लोग अपनी भेड़, बकरियों एवं घोड़ों पर चंवर, नमक, ऊनी वस्त्र, सुहागा आदि लेकर नियंत्रण भोटिया लोगों के यहाँ पहुँचते और चीनी, चांवल, तम्बाकू, धातु के बर्तन, कपड़ा, घी आदि लेकर जाते। विश्वास एवं सद्भाव पर आधारित यह व्यापार भले ही आकार की दृष्टि से छोटा था, लेकिन उनके जीविकोपार्जन के लिए पर्याप्त था। सुदूर अतीत के महाभारत काल में इस जाति के लोगों के तिब्बत मूल के साथ व्यापारिक घनिष्ठ सम्बन्ध उन्हें घनिष्ठ रूप से बांधे हुए थे। उनका एकाएक टूटकर बिखर जाना न केवल भोटान्तिकों के लिए अपने आर्थिक जीवन के आधार पर कुठाराघात था वरन् सामाजिक समायोजन की दिशा में उनके लिए बड़ी चुनौती भी बन गया।[14]

ब्रिटिश साम्राज्य के समय वर्ष 1904 में ल्हासा से लेकर ग्यान्तसे तक विस्तृत तिब्बती प्रदेश अंग्रेजों के अधिकार में हो जाने के कारण यह भारत का अविभाज्य अंग बन गया था। अंग्रेजी शासन की सम्पत्ति के पश्चात् एवं चीनी प्रस्ताव में आने से पूर्व तक तिब्बत एवं सीमावर्ती क्षेत्र के निवासियों के मधुर सम्बन्ध बने रहे। स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद भारत ने विभिन्न देशों के साथसम्बन्धों का नवीनीकरण किया। तिब्बत के साथ भी 1954 में समझौता हुआ जिसका आधार पंचशील था जिसमें पाँच बातों का समावेश था– (1) दोनों देशों की प्रादेशिक अखण्डता एवं सम्प्रभुता को सम्मान करना, (2) अनाक्रमण (3) दोनों देशों के निजी मामलों में स्वतत्रंता (4) पारस्परिक समानता एवं हित (5) शांतिपूर्ण सह अस्तित्व।

लेकिन तिब्बत पर अधिकार करने के बाद चीन ने अपनी सीमाओं का विस्तार भारत की तरफ करना शुरू किया और 1962 में भारत पर आक्रमण करके हिमालय की अभेद्यता को नष्ट कर हमारी उत्तरी सीमा पर शत्रु रूप में तैनात हो गया। अपनी सीमा का विस्तार हमारे क्षेत्रों में करने लगा चीन के रवैये से भारत–तिब्बत

सम्बन्धों को आघात तो पहुँचा साथ ही तिब्बत से लगने वाला 4050 वर्ग कि.मी. भू–भाग भारत चीन के मध्य विवाद का विषय बन गया। यद्यपि तिब्बत के निवासी चीन के साथ सामांजस्य स्थपित नही कर पाये। यही कारण था कि चीन ने सन् 1962 में दो सप्ताह तक युद्व लड़ने के बाद युद्ध समाप्ति की घोषणा कर दी। तिब्बत की जनता का तिब्बती मुक्ति सेना के साथ असहयोग पूर्ण रूख के कारण चीन लम्बे समय तक भारत के साथ युद्ध नही लड़ सकता था। तिब्बतियों का चीन के प्रति आक्रोशित होने का अर्थ होगा कि एक साथ दो युद्व करना। चीन की नीति के अनुसार तिब्बतियों का आक्रोश कभी उग्र ले जाता तो कभी सतही बना रहता। सिक्किम का भारत में विलय, अरूणाचल प्रदेश को राज्य का दर्जा दिये जाने पर चीन ने कड़ा विरोध किया। पूर्वोत्तर भारत में चल रहे आन्दोलन में भी चीन ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया। इतना ही नही पकिस्तान के साथ गठजोड़ स्थापित करके भारत की 15200 वर्ग कि.मी. की स्थलीय सीमा को असुरक्षित कर दिया है।

तिब्बत का वर्तमान परिदृश्य

तिब्बत को अपने लिए महात्वपूर्ण समझने वाले चीन ने उसे नियंत्रण में लेने और 1962 में भारत पर आक्रमण करने के पश्चात्वर्ष 1964 मे अपना पहला परमाणु परीक्षण करके अपने को एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप मे स्थापित किया। वर्ष 1966 में चीन ने एक परमाणु अस्त्रमुख से लैस एक रोकेट 700 कि.मी. दूर जिनजियांग टेस्ट रेंज मे दागा था जो कि जोखिम भरा परीक्षण था, जरा–सी भी चूक होने पर भयानक तबाही हो सकती थी। तब से लेकर आज तक चीन ने अपना परमाणु कार्यक्रम जारी रखा हुआ है। चीन के पास 300 से 400 तक सभी किस्म के परमाणु बमों का जखीरा है। जिनमें से कई दर्जन तिब्बत के पठार में है जिसे किहाई प्रांत कहा जाता है।[15] वर्ष 1958 किहाई प्रांत मे 9वीं अकादमी की स्थापना कर डाली जिसका कार्य परमाणु बम निर्माण करना था।चीन के परमाणु बम का परीक्षण स्थल कोकोनार 9वीं अकादमी के समीप था। वर्ष 1971 में चीन ने अपना पहला परमाणु अस्त्र तिब्बत में 9वीं अकादमी के पश्चिम में कैदम बेसिन पर ही उतारा। कैदम बेसिन और श्याओ कैदम का निर्माण परमाणु मिसाइल के विकास के लिये ही किया गया था।मध्यम दूरी की बैलिस्टिकमिसाइल डी.एफ.4 जिसकी मारक क्षमता 4800 कि.मी. थी। उसका परीक्षण स्थल भी वहीं बनाया गया। ये मिसाइलें भारत के किसी भी भाग को नष्ट करने में सक्षम हैं।मिसाइल स्थल को रेलमार्ग द्वारा गोलमुंड तक जोड़ा गया है, जो कि तिब्बत जाने का मुख्य रेल मार्ग है। कैदम बेसिन से 200 कि.मी. दक्षिण–पूर्व मे डिंलिगा नामक एक और प्रक्षेपण स्थल है जिस पर अन्तर्राष्ट्रीय बैलेस्टिक मिसाइलें लगा रखी हैं। 12,800 कि.मी. की मारक क्षमता वाली ये मिसाइलें यूरोप एवं अमेरिका के किसी भी भाग को नष्ट करने में सक्षम हैं।[16] तिब्बत प्रान्त आमदो के किहाई और सिचुआन प्रांतो के बीच सीमा पर एक नया परमाणु प्रक्षेपास्त्र डिवीजन बनाया गया है। यहां पर चार सी.एस.एस. प्रक्षेपास्त्र लगाये गये हैं जिसकी क्षमता 8,000 मील है।[17]

चीन एव तिब्बत सम्बन्धों के विशेषज्ञ कर्नल वीरेन्द्र सहाय वर्मा ने अपने एक लेख में लिखा था कि ''चीन ल्हासा के उत्तर में स्थित नागचुका व लोपनोर को नाभकीय अस्त्र परीक्षण रेंज विकल्प के रूप में विकसित कर रहा है, ताकि चीन हवाई हमले से सुरक्षा के लिये उन्नत मिसाइलों और परमाणु अड्डे के रूप में उसका कारगर इस्तेमाल हो सके। नागचुका पर 1800 कि.मी. तक मार करने वाली सी.एस.एस. दर्जे की वैलेस्टिक मिसाइल दागने वाले दर्जन भर मिसाइल लांचर भी है। चीन ने नाभकीय एवं जमीन पर सक्रिय गातिविधियों के लिए पूरे तिब्बत मे छोटी एवं बड़ी एयर फील्ड्स विकसित की है।

ल्हासा के दक्षिण में 60 कि.मी. दूर गोंगर में चीन ने प्राथमिक हवाई अड्डा बनाया, जहाँ किसी भी प्रकार के विमान उतर सकते हैं। शिगात्से, नागचुका, गोलमुंडा और पंगटा अन्य एयर बेस हैं। जहाँ से चीन के अधिकांश लड़ाकू जेट एंव विमान लगभग पूरे भारत पर हमला कर सकते हैं।''[18]

चीन की प्रारम्भ से ही यही नीति रही है कि चीनी नागरिकों को न्यूक्लीयर विकिरण से दूर रखा जाये। चीन द्वारा न्यूक्लीयर परीक्षण स्थल, न्यूक्लीयर प्रतिक्रियाओं, न्यूक्लीयर प्रोससीज फैसेलिटिज तथा न्यूक्लीयर संयत्र स्थापित करने के लिए सबसे उत्तम क्षेत्र तिब्बत था, जो कि गैर चीनी आबादी के साथ ही यूरेनियम के भण्डार से परिपूर्णथा। इसलिए चीन ने तिब्बत को व्यापक रूप से सैनिक स्थल के रूप में बदल दिया। जहाँ पर बडी संख्या मे चीनी सैनिक, 17 गुप्त रडार, 14 सैनिक हवाई अड्डे, 8 प्रक्षेपास्त्र ठिकाने (इनमें 8 अर्न्तद्वीपीय शाक्तिशाली प्रक्षेपास्त्र), 70 मध्यम दूरी के मार करने वाले प्रक्षेपास्त्र, 20 कि.मी. दूर तक मार करने वाले प्रक्षेपास्त्र, रासायनिक युद्व के अभ्यास हेतु सामग्री मौजूद है।[19]

चीन द्वारा तिब्बत के प्राकृतिक सम्पदा पर कब्जा पूर्णत किया जा चुका है। तिब्बत में 1959 वनों का क्षेत्र 2.52 करोड़ हैक्टेयर था, जो कि अब 1.36 हेक्टेयर रह गया है। इन वनों के दोहन से चीन खरबों रूपये कमा चुका है। अनियंत्रित वन दोहन से भारत को बाढ़ का सामना करना पड़ता है। तिब्बत में उपलब्ध 126 किस्म के खनिज पदार्थों के भण्डार भी चीन द्वारा उपयोग कर लिये गये हैं। यहां 30 प्रतिशत खनिज पदार्थों के भण्डार समाप्त हो चुके हैं। तिब्बत स्थित क्षेत्र में चीन जगह–जगह बाँध परियोजनायें चला रहा है। तिब्बत के पूर्वी पठार पर स्थित नामचारवरा ब्रह्मपुत्र नदी पर चीन झांग्मू परियोजना बना रहा है। 40 मिलियन किलोवाट प्रतिघण्टा की दर से बिजली उत्पन्न करने वाली इस परियोजना पर 11.38 मिलियनडालर का खर्च हुआ है। ब्रह्मपुत्र को मोड़ने के लिये नाभकीय विस्फोट द्वारा 10 कि.मी. लम्बी सुरंग का निर्माण कर रहा है। ब्रह्मपुत्र की सहायक नदियाँ सियाँग, सवान्सरी लोहित नादियों पर भी जल विधुत परियोजनाओं पर कार्य चल रहा है। व्यापक स्तर पर हॉनवंशी चीनियों को तिब्बत मे बसाकर तिब्बतियों की संख्या कम की जा रही है। तिब्बत मे 75 लाख चीनी एंव 60 लाख तिब्बती रह रहे हैं। वर्ष 1950 से पूर्व तिब्बत में चीनी दिखाई नही देते थे, आज तिब्बत में, तिब्बत चीन का अनुपात 3:1 का है अर्थात तिब्बती अपने ही देश में अल्पसंख्यक हो गये हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव

भारत की उत्तरी सीमा का विस्तार हिमालय के साथ–साथ हुआ। महाभारत काल से ही भारत एवं तिब्बत के व्यापारिकसम्बन्ध रहे हैं। ब्रिटिश साम्राज्य के समय वर्ष 1904 में ल्हासा से लेकर ग्यान्तसे तक विस्तृत तिब्बत प्रदेश अंग्रेजों के अधिकार मे आ जाने के कारण भारत का अविभाज्य अंग बन गया था। लेकिन तिब्बत पर चीनी अधिकार के बाद तिब्बत भारत के परम्परागत सम्बन्धों में अवरोध उत्पन्न हो गया। तिब्बत मे रेलमार्ग एंव सूचनातंत्र का जाल बिछाकर भारत की सीमा के निकट आ गया है। सीमा से लगा हर छोटा–बड़ा कस्बा आई.एस.डी. एवं एस.टी.डी.एवं संचार के अन्य साधनों से जुड़ चुका है। संचार क्रान्ति के कारण होटल एवं अन्य व्यवसाय फल–फूल रहे हैं। चीन द्वारा भारतीय सीमा के क्षेत्रों में विकसित की जा रही है सूचना क्रान्ति निश्चित रूप से हमारे लिए समस्या उत्पन्न कर सकती है।

चीन ने जिस तिब्बत पर कब्जा किया हुआ है और उसे अपना मानता है। उसका चीन से कुछ भी नही मिलता है। तिब्बती चीन से बिल्कुल अलग भाषा, नस्ल, धर्म, संस्कृति के लोग

हैं। तिब्बती भाषा चीनी भाषा से बिल्कुल नहीं मिलती है। यहां की लिपि भी भारत में गुप्तकाल की ब्रह्मीलिपि से विकसित हुई है। चीनी जुल्म के कारण आज 11 लाख तिब्बती निर्वासित जीवन जी रहे हैं। उनमें सबसे अधिक 85 हजार भारत में रह रहे हैं।तिब्बत में जारी चीनी गतिविधयां भारत के लिए गम्भीर समस्याऐं उत्पन्न कर सकती है। यद्यपि भारत नेचीनी गतिविधियों का हमेशा विरोध किया है। भारत को स्वतः ही तिब्बत सीमा की ओर से चौकन्ना रहना होगा और अपनी सुरक्षात्मक स्थिति को मजबूत करना होगा। चीन के सीमावर्ती क्षेत्र में हो रही गतिविधियों पर अधिक ध्यान देने की नीति को महत्वपूर्ण भाग बनाना होगा। तिब्बत में चीनी अत्याचारों को अन्तर्राष्ट्रीय मंचो पर उठाकर चीन पर दवाब बनाया जा सकता है। ऐसे में तिब्बत भी स्वतंत्र हो सकेगा और चीन की गतिविधियों पर अंकुश भी लग सकेगा।

सन्दर्भ सूची

1. हिन्दी विश्वकोष भाग–5, पृ.सं. 379
2. तदैव –––
3. वाचस्पति गैरोला – भारत के उत्तरपूर्वी सीमान्त क्षेत्र, पृ0सं0–55
4. तदैव, पृ0सं0 57
5. हिन्दी विश्वकोष, भाग – 5 पृ 379
6. तदैव
7. दैनिक जागरण, 28 मई, पृ0सं0 379
8. बी0एन0, बुल्लिक– द चाइनीज बेट्रॉयल, पृ0सं0 59–60
9. वाचस्पति गैरोला, भारत के उत्तरी पूर्वी सीमान्त क्षेत्र पृ0सं0 37
10. सामाजिक चिन्तन शोध पत्रिका, जुलाई 2010, पृ0सं0 80
11. तदैव –– पृ0सं0 53
12. सुरक्षा चिन्तन, शोध पत्रिका, जुलाई 2010 पृ0सं0 80
13. तिब्बत बुलेटिन – मई 1991, पृ0सं0 14–15
14. राम राहुल – द हिमालय बॉर्डर लैण्ड पृ0सं0 14–15
15. अमर उजाला – 7 नवम्बर 1998
16. शोध धारा – शोध पत्रिका सितम्बर 2008, पृ0सं0 101
17. सुरक्षा चिन्तन जुलाई 2010, पृ0सं0 80
18. अमर उजाला – 7 नवम्बर 1998
19. सुरक्षा चिन्तन–शोध पत्रिका, जुलाई 2010 पृ0सं0 80